International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; June 2017; Page No. 264-269

उदयभानु हंस के काव्य में सामाजिक जीवन मूल्य

डॉ. बबीता तंवर

Govt. College Maham, Rahtak, Haryana, India

प्रस्तावना

समाज शब्द का प्रयोग मुख्यतः मानव–समूह के रुप में किया जाता है। समाज मनुष्य की वह इकाई है जिसमें उसके हित–चिन्तन, सुख–दुख तथा जीवन के व्यवहार समाहित रहते हैं। समाज एक विशाल सागर के समान है, जिसमें विभिन्न जातियों एवं धर्मों रूपी जल–धाराएँ समा जाती हैं फिर भी वे अपने अस्तित्व को किसी न किसी रुप में उस बृहत् जल राशि में बनाए रखती हैं। समाज का प्रत्येक प्राणी जब राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा व्यक्तिगत सम्बन्धों को एक–दूसरे से बनाए रखता है तब ऐसी ही सजातीय भावना वाले व्यक्तियों का एकीकरण समाज के नाम से जाना जाता है।

प्रत्येक प्राणी की यह कामना होती है कि व्यक्तिगत उन्नति के साथ–साथ समाज में भी उन्नति करे लेकिन इसके लिए प्रत्येक प्राणी को सजग होने की आवश्यकता है, साथ ही उदारचेता और उज्ज्वल उन्नत चरित्र वाले व्यक्तियों के संगठन की आवश्यकता हैं क्योंकि ''समाज का अस्तित्व हमेशा किसी सामाजिक संरचना के रूप में ही पाया जाता है। एक ऐसे संगठन के रुप में जो निरन्तर विकसित होता रहता है तथा जिसके प्रमुख क्रिया–कलाप किसी देवी शक्ति पर नहीं बल्कि उत्पादन–प्रणाली के विकास पर आधारित होते हैं।''[1] समाज के लिए सुनिश्चित व्यवस्था और विधि का होना अनिवार्य हैं। यदि किसी समाज में ऐसा संभव नहीं है तो यह स्थिति वास्तव में इसके लिए घातक है। ''मनुष्यों में जो चलन, कार्य, विधियाँ, पारस्परिक सहायता की जो प्रवृत्ति, शासन की भावना आदि अनेक समूह व विभाग विद्यमान हैं। मानव–व्यवहार के सम्बन्ध में जो स्वतंत्रताएँ व मर्यादाएँ हैं उनकी व्यवस्था ही समाज है।''[2] समाज स्वयं एक संघ है, एक संगठन है, औपचारिक सम्बन्धों का सजीव योग है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में एक–दूसरे से आबद्ध हैं, चाहे उसका स्वरूप कुछ भी हो फिर भी सभी अन्योन्याश्रित हैं। प्रत्येक की सामूहिक अस्मिता ही समाज की सूचक है।'' समाज निश्चित सम्बन्धों एवं व्यवहार के नियम में बद्ध व्यक्तियों का एक ऐसा संगठित समूह है जो उनके सम्बन्धों को स्वीकार न करने वाले प्राणी–समूह को समाज के सदस्यों से अलग करता है।''[3] इस प्रकार ''बहुत से लोगों का गिरोह या झुण्ड, जो एक जगह रहने वालों अथवा एक ही प्रकार का काम करने वाले लोगों का वर्ग, दल या समूह हो या किसी विशिष्ट उद्देश्य से स्थापित की हुई सभा या किसी प्रदेश या भू–खण्ड में रहने वाले लोग, जिनमें सांस्कृतिक एकता होती है तथा किसी सम्प्रदाय के लोगों का समुदाय समाज है।''[4]

उपर्युक्त परिभाषाओं का भावन कर कह सकते हैं कि केवल व्यक्तियों के समूह का नाम ही समाज नहीं है बल्कि वह समूह के अन्तर्गत व्यक्तियों के सम्बन्धों की व्यवस्था है। ये व्यक्तिगत सम्बन्ध ही सामाजिक रिश्तों को अभिव्यक्त करते हैं जो उसके सामाजिक जीवन में विभिन्न क्रिया–कलापों के माध्यम से स्थापित होते हैं तथा मनुष्य को सम्मिलित रूप से सामाजिकता का रूप प्रदान करने में सहायक होते हैं। इस प्रकार ये सम्बन्ध मनुष्य को पशुओं से गुणात्मक आधार पर अलग करते हैं और यह भी बताते हैं कि मनुष्य के लिए समाज से अलग रहकर जीवन व्यतीत करना संभव नहीं है। अतः समाज विभिन्न सामाजिक घटनाओं का एक असम्बद्ध संगठन नहीं है बल्कि एक सुसम्बद्ध व्यवस्था है जिसके विभिन्न अवयव एक–दूसरे पर आधारित हैं। समाज के ये आधारभूत तत्त्व ही देश एवं संस्कृति को सुदृढ़ आधार प्रदान करते हैं।

इसी प्रकार हम 'मूल्य' शब्द पर भी विचार करें तो 'मूल्य' शब्द 'मूल' धातु में 'यत्' प्रत्यय लगाने से बना है। जिसका अर्थ है– कीमत, दाम, उपयोगिता, मोल लेने योग्य वस्तु के बदले में दिया जाने वाला धन आदि।[5] संस्कृत–हिन्दी कोश में मूल्य का व्युत्पत्तिपरक अर्थ इस प्रकार दिया है– 'मूल' धातु में 'यत्' प्रत्यय के संयोग से मूल शब्द बनता है। जो दाम, कीमत, गरिमा तथा सारता आदि अर्थों में प्रयुक्त होता ळें [6]

'मूल्य' शब्द के लिए अंग्रेजी का 'एग्जियोलोजी' शब्द भी प्रयुक्त किया जाता है। जो यूनानी शब्द 'एक्सियम' तथा 'लागस' के योग से बना है। ' एक्सियम' का अर्थ है– मूल्य या कीमत तथा 'लागस' का अर्थ है– तर्क, सिद्धान्त, मीमांसा आदि। किसी वस्तु की किसी अन्य वस्तु से तुलना करके निर्णय दिया जाता है तो वह 'मूल्य' होता है। इस तरह वस्तु के दो रूप हुए–तथ्य और मूल्य।7 इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मूल्य जीवन का अभिन्न अंग है, अर्न्तदृष्टि एवं अवधारणा है, एक दृष्टिकोण है।8 साहित्य में मूल्य का विशिष्ट अर्थ है। 'मूल्य' शब्द केवल लोक कल्याण एवं मानव हित वाले अर्थ तक ही सीमित नहीं है अपितु वह साहित्य में लोक कल्याण की कामना के साथ सत्य और सुन्दर को भी समाहित कर लेता है।

ठस प्रकार केवल मानव–समूह के नाम को समाज नहीं कहा जा सकता अपितु इस समूह का किन्हीं अन्तः सूत्रों द्वारा जुड़ा होना भी नितान्त जरूरी है। किसी भी समाज की महत्ता उसके रीति–रिवाजों, प्रथा–परम्परा और प्रणालियों, सत्ता और सहयोग के रूपों, विभाजन के तत्त्वों और व्यवहार आदि के विधि–निषेधों में निहित होती है। समाज लगातार परिवर्तन की ओर अग्रसर रहता है और उसके विभिन्न घटकों को जोड़ने वाले सम्बन्ध भी जटिल होते हैं। इसके साथ यह भी ध्यातव्य है कि प्रत्येक समाज में व्यक्ति के आचरण, कर्म और उनके विचारों की उच्चता के कुछ निकष होते हैं जो समाज को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं तथा विशेष प्रकार के आचरण के लिए प्रेरित भी करते हैं, इन्हें ही हम सामाजिक जीवन–मूल्य कहते हैं।

हंस जी की कविताएँ समाज से प्रतिबद्ध जागरूक कवि की कविताएँ हैं जिनमें जीवन के विभिन्न रंग घुल–मिल गए हैं। इन्होंने आम–आदमी के जीवन–संघर्षों को अपनी प्रतिभा द्वारा

काव्य में पिरोया है क्योंकि कवि जीवन मूल्यों के प्रति अत्यधिक आश्वस्त है। ''एक सार्थक रचना मानवीय संवदेनाओं से उभरती हुई सामाजिक सरोकार की गहरी पकड़ के साथ जीवन–मूल्यों को तलाशने की चेष्टा करती है। रचनाकार बौद्धिक जागरूकता के साथ वस्तु स्थिति का रेखाकंन करता हुआ जीवन से सीधा साक्षात्कार करता है। यदि उसकी मुठभेड़ सतही और दिखाऊ होती है तो कुछ ही समय में वह जिन्दगी और समाज से कतरा कर पलायनवादी हो जाता है यदि उसमें युग सम्पृक्ति, तलस्पर्शी पकड़ और सामाजिक अभिप्रायों की विकासशीलता को समझने की हिम्मत होती है तो उसे समय की चुनौती से टकराने में कामयाबी भी हासिल होती है। रचनाकार समाज और जीवन के अन्तर्विरोध का पर्दाफाश करता हुआ, यथार्थ की खुरदरी जमीन पर वादीय परिधि से ऊपर उठकर बहुआयामी जीवन के विविध संदर्भों को रूपायित करता है।''[9]

हंस जी ने अपनी कविताएँ सामाजिक जीवन–मूल्यों के आधार पर लिखी हैं जो सामाजिक आशय लेकर जनमानस के प्रति समर्पित हुई दिखाई देती हैं। साथ ही इनमें मानवीय सरोकारों की भूमिका का भी निर्वहन हुआ है। हंस जी ने सामाजिक परिवेश में जो कुछ अनुभूत किया, उसी को अपने काव्य में पिरोया; अभिव्यक्त किया। वर्तमान युग और संस्कृति पर पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का रंग चढ़ता हुआ दिखाई देता है, जिसके फलस्वरूप हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक अस्मिता और अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। एक सजग कलाकार इन सभी परिवर्तनों को देख मौन नहीं रह सकता। वह इस परिवर्तित दशा और दिशा की अनुभूतिगम्य पीड़ा को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त कर समाज की आँखे खोलने का प्रयास करता है क्योंकि यह परिवर्तन हमारे सामाजिक जीवन– मूल्यों को प्रभावित करता है।

मानवता के चतुर चितेरे हंस जी जीवन–मूल्यों के संरक्षण के लिए, उनकी अनुपालना एवं अनुगमन के लिए समाज में चेतना लाने का प्रयास करते हुए कह उठते हैं–

''सारे जीवन–मूल्य झुलसते आज स्वार्थ के दावानल में,
मानवता की लाश रखी है आदर्शों के ताजमहल में।
मैं उनकी जिन्दगी के लिए स्वयं मौत से जूझ पडूँगा,
जनको साँस मिली है लेकिन जीने का अधिकार नहीं है।''[10]

केवल यही नहीं स्वार्थ ने मनुष्य को छली, कपटी और झूठा बना दिया है। देश में नीचे से ऊपर तक अन्यास और भ्रष्टाचार फैला हुआ है लेकिन लोग सब कुछ देखने और जानने के बाद भी अँधे, गूंगे और बहरे बने हुए हैं। इसी विड़म्बना की अभिव्यक्ति हंस जी इस प्रकार करते हैं –

''ढोंगी दुनिया सत्य न बोले,
बिना स्वार्थ के गाँठ न खोले
कुछ न देखती, कहती सुनती
अँधी गूंगी, बहरी।'' [11]

परिवर्तित सामाजिक परिवेश में जीवन–मूल्यों का स्तर प्रतिदिन गिर रहा है। आए दिन देश में रिश्वतखोरी, डकैती, अपहरण और बलात्कार व निर्मम हत्याएँ होती हैं जिनसे प्रतिदिन अखबार रंगे हुए मिलते हैं। इन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन मूल्यों का स्थान राक्षसों ने ले लिया है–

''घूस डकैती अपहरण बलात्कार संहार
अपराधों से आजकल भरे पड़े अखबार।।''[12]

आज की नारी वेशभूषा ही नहीं सोच भी बदल गई है। उसने लज्जा नामक आभूषण और त्याग भावना को त्याग दिया है। वह मयखाने में पुरूषों के साथ सोमरस की चुस्कियाँ लेने से जरा भी नहीं हिचकिचाती। यथा–

''वेशभूषा ही नहीं, सम्पूर्ण बदली सोच
त्याग लज्जा हो गई निर्भीक निःस्कोच
पुरूष मित्रों संग लेती 'सोमरस' की चुस्कियाँ।''[13]

वैयक्तिक जीवन के अन्तर्गत मन की उदारता का विशेष स्थान है क्योंकि कवि मानसिक भावों की कविता के माध्यम से प्रकट करता है। 'मानव प्रेम' नामक कविता में कवि के मन के भाव इस प्रकार हैं कि व्यक्ति त्याग भावना में भी एक विशेष सुख की अनुभूति होती है। ऐसी दशा में कवि व्यक्तिगत चिन्ता का त्याग करके पीड़ित त्रस्त व्यक्ति की सहायता में विश्वास करता है। हंस जी की उच्च कोटि की मानसिक उदारता की अभिव्यक्ति देखिए –

''मुझें नहीं रहती केवल अपने तन की चिन्ता,
मैं तो हर घायल मन का उपचार करता हूँ।''[14]

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः उसे समाज में समता व सौहार्दयुक्त जीवन व्यतीत करना चाहिए। भेदभाव से दूर रहने का सन्देश देते हुए और मानव प्रेम का बिगुल बजाते हुए हंस जी कहते हैं –

''भेदभाव का मैं न कभी व्यवहार करता हूँ
मैं मानव हूँ, हर मानव से प्यार करता हूँ।''[15]

मन की उदारता पर कवि कटाक्ष करते हुए कहता है कि लोगों की उदारता तो देखिए कि साधु संयासी तो भूख से व्याकुल होकर मर जाते हैं लेकिन कुत्ते, बिल्ली आदि पकवान खाते हैं इस सामाजिक विड़म्बना को हंस जी ने इस प्रकार प्रकट किया है–

''बिल्ली कुत्ते खा रहे पकी पकाई खीर।
महानगर में भूख से ही मर गया फकीर।।''[16]

इस दोहे पर हमें कबीर और निराला की छाया दृष्टिगोचर होती है फिर भी यह कवि की मौलिक कृति हैं। '' इस तरह कविवर हंस भारतीय संस्कृति के उस महान् संदेश को अपने गीतों में ढ़ालते रहे हैं, जो मानव जीवन को सार्थकता और उच्चता प्रदान करता है। कवि का मत है कि जब तक ह्रदय की भावना पवित्र नहीं होगी, तब तक बाहरी आड़म्बर और दिखावा किसी काम का नहीं।''[17] हंस जी कबीर–शैली में आड़म्बरों का विरोध करते हुए कहते हैं –

''मन का मैल नहीं धुल सकता गंगा नहा लेने से,
मुँह के दाग नहीं छिपते हैं, दर्पण को गाली देने से।
कितने देवी देव मनाओ, निशिदिन पूजा पाठ कराओ,
जब तक जले ना दिल का दीपक, सारा पूजन व्यर्थ रहेगा।''[18]

व्यक्ति का पुरूषार्थ में विश्वास ही सफलता की कुँजी कहा जाता है। कर्म जीवन का सर्वोपरि मूल्य है जो मनुष्य एवं समाज को उन्नति की ओर ले जाता है, इससे व्यक्ति के सारे मनोरथ पूर्ण होते हैं। हंस जी ने 'वासना' कविता में कहा है–

''है जिन्हें विश्वास अपनी शक्ति पर पुरूषार्थ का,
पूर्ण करता है सदा ईश्वर भी उनकी कामना।''[19]

हमारा समाज कर्म–प्रधान है। परिस्थितियों से लोहा लेने वाले प्राणी के लिए विरोध की कोई महता नहीं है, वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत् रूप से संघर्ष करता है और उसे प्राप्त करे ही दम लेता है। हंस जी शायद यही कहते हैं क्योंकि जीवन में संघर्ष सर्वोपरि जीवन–मूल्य है –

''पर्वत की पागल चट्टानें लाख विरोध करें,
निर्झरिणी की प्रहार धार को रोक न पाएंगी।
पतझड़ की बीमार भुजाएँ मेरी बगिया में,
फूल खिलने से बहार को न रोक पाएंगी।''[20]

व्यक्ति–पुरूषार्थ–मूल्य को मानव प्रेम विशिष्टता प्रदान करता है। हंस जी दीन–दरिद्र के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं और दिशाहीन व्यक्ति का मार्ग–दर्शन करके उसका पथ प्रशस्त करने का उपदेश–संदेश देते हैं 'मानव–प्रेम' कविता में उसका जीवन्त रूप द्रष्टव्य है

''श्रम का भूखा पेट कहीं लंगड़ाता दर्द मिले,
मैं सब की पग धूल उठा कर तिलक लगाता हूँ।
अपना भाग्य टटोल रहे जो अँधियारे पथ में,
उन हाथों को किरणों का कंगन पहनाता हूँ।''[21]

भारतीय समाज में अहं को अच्छा नहीं माना जाता है। इसके कारण व्यक्ति अहंकारी बन जाता है और वह उच्छृंखल हो जाता है। यदि व्यक्ति इस अहं भाव से मुक्त हो जाता है, इसे त्याग देता है तो वह और भी शक्तिशाली और मूल्यवान हो जाता है। यदि व्यक्ति इस अहं का त्याग नहीं करता तो उसमें राक्षसी गुण प्रवेश कर जाता है। अतः इस अहं भाव से मुक्त होना नितान्त आवश्यक है। हंस जी मनुष्य के अहं भाव को चरमोत्कर्ष पर देखकर कहते हैं –

''गगन छू रहा अहं मनुज का,
पृथ्वी बांधे हाथ खड़ी है।
बना विधाता स्वयं विश्व का
सत्ता जिसके पांव पड़ी है।''[22]

अहं भावना व्यक्ति के विकास में बाधक है। अहं भावनायुक्त व्यक्ति की वही दिशा होती है जो दो नावों पर सवार नाविक की होती है ; ऐसा नाविक कभी भी अपनी मंजिल तक नहीं पहुंच सकता –

''पाँव पे अपने क्यों कुलहाड़ी मार रहे ?
इक दिन अपनी भूल पे तुम पछताओगे।
अलग–अलग नावों पर चढ़ने वालो।
अपनी मंजिल पर तुम पहुँच न पाओगे।।''[23]

हंस जी ने व्यक्तिगत मूल्य में ''अस्तित्व का प्रश्न' मूल्य को उद्घाटित किया है। इन्होंने अस्तित्व के तथ्य को पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है क्योंकि अस्तित्वहीन व्यक्ति समाज का अंग नहीं बन सकता। प्रत्येक व्यक्ति का अपना अस्तित्व होता है, जो उसे संघर्ष मूल्य के लिए प्रेरित करता है ठीक इसके विपरीत अस्तित्वहीन व्यक्ति संघर्षरहित होकर उसके समक्ष झुक जाता है। अस्तित्वान प्राणी अपने अस्तित्व का आश्रय लेकर अपने ढंग से जीवन व्यतीत करता है। 'घिर आया कुहासा' नामक कविता में कवि यहीं कहता है –

''शूर सूली पर चढ़कर सुखी होते,
सागरों में भी छुपे ज्वालामुखी होते।
भीष्म की वह शूल–शय्या,
भावना का खेल भैया
अश्रु का उल्लास में अन्तर जरा सा।"[24]

हंस जी केवल व्यक्ति की बात नहीं करते अपितु अपने देश के अस्तित्व को बचाने के लिए भी व्यक्ति को प्रेरित करते हैं –

''सहज नहीं पर 'पूर्व को पश्चिम' का स्वामित्व।
हमें बचाना है सदा भारत का अस्तित्व।''[25]

वे भारत के स्वर्णिम अतीत एवं प्राचीन मूल्यों की अस्मिता के माध्यम से वर्तमान परिवर्तित परिस्थितियों में अस्तित्व के संरक्षण की बात करते हैं –

''देश 'जगद्गुरू ' था कभी, नहीं मात्र संयोग।
कहाँ गया वह स्वर्ण युग ? कहाँ गए वे लोग ?''[26]

व्यक्ति– स्वातंत्र्य की इस भावना ने व्यक्तिगत सोच को तो बदला ही है वहीं व्यक्ति के जीवनयापन का ढंग भी बदल गया। इस बदलाव ने परिवार और समाज में अनेक समस्याओं को जन्म दिया। आज सामाजिक परिवेश में जीवन मूल्यों में टकराहट की स्थिति उत्पन्न हो गई है, वहीं व्यक्तिगत स्वातंत्र्य ने परोपकार, सहनशीलता और सहानुभूति को भी सीमित कर दिया है। स्वातंत्र्य के इस भाव ने प्राचीन परम्परा और मूल्यों को प्रभावित किया है, व्यक्ति को स्वार्थी बनाया ; जिससे धन और पद प्रतिष्ठा को महत्व मिला। आज व्यक्ति स्वातंत्र्य एक फैशन बन चुका है। 'सोने चाँदी का नशा' कविता में हंस जी ने कहा है –

''युवा जीवन के लिए स्वच्छन्द जीवन,
आजकल तो एक फैशन बन चुका है।''[27]

व्यक्ति स्वातंत्र्य के इस फैशन ने सम्बन्धों में दरार पैदा कर दी है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से जीवनयापन करता है। इस चलन ने पारस्परिक प्रेम और सौहार्द को भी वीरान कर दिया। 'फूल से कह दो' कविता में इसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है

''हर तरफ वीरान बस्ती हो रही,
दिल बुझे हैं दूर मस्ती हो रही,
मुस्काते होंठ मँहगे पड़ गये,
जिन्दगी से मौत सस्ती हो रही।''[28]

व्यक्ति स्वातंत्र्य के अन्तर्गत एक अन्य विड़म्बना यह है कि वर्तमान युवा–पूजा पाठ को भूल गया है। हंस जी के अनुसार –

युवकों ने अपना लिए आज पश्चिमी ठाठ।
व्यर्थ हुए उनके लिए मंदिर पूजा –पाठ।।''[29]

आस्था जब व्यक्ति के जीवन से पलायन कर जाती है तो आशा धूमिल पड़ जाती है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति को अवसाद घेर लेते हैं। ऐसी स्थिति में व्यक्ति नकारात्मक मूल्यों की ओर अग्रसर होता तो व्यक्ति का व्यक्तित्व संयुक्त नहीं रहता एक अवस्था में पहुँच कर वह अस्त–व्यस्त हो जाता है। व्यक्तित्व का विघटन वस्तुतः चरित्र के अवरोध या बिखराव को प्रकट करता है। अतः सभ्यता का आधार 'मूल्य' होते हैं और जब मूल्य टूट जाते हैं तो मूल–प्रवृतियाँ मनुष्य को जंगली जानवर बना देती हैं।[30] जो वास्तव में विघटन की सूचक हैं। व्यक्तिगत मूल्यों के अभाव में व्यक्ति व्यक्ति नहीं रह जाता है । हंस जी व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि आज भेडियों को वन में ढूँढने की आवश्यकता नहीं है, ये आज आपको हर जगह मिल जायेंगे –

''देखिए,
कैसे बदलती आज दुनिया रंग,
आदमी की शक्ल–सूरत,
आचरण में भेड़ियों के ढंग।''[31]

स्वार्थ–सिद्धि के लिए लोग बहुरूपिए बन गए हैं, उनका आचरण बदल चुका है; अन्दर–बाहर का समन्वय लुप्त हो गया है। यथा –

''लोग यहाँ बहुरूपिए, उनकी कथा न छेड़।
भीतर से तो भेड़िए, बाहर से हैं भेड़।।''[32]

कविता के कलेवर में सामाजिकता समाहित होती है। '' वह सामाजिक जीवन–मूल्यों के प्रति समर्पित होती है और सच बात यह है कि सत्ता की जिस भेड़िया–भूख ने इन जीवन–मूल्यो को तोड़ा है, उन्होंने वैसा ही किया है, जैसा अपराध रावण कंस और दुर्योधन ने किया था।''[33] ऐसी स्थिति में व्यक्ति किस पर विश्वास करे और कैसे? क्योंकि आज प्रत्येक प्राणी के अन्तस् में छल विराजमान है। हंस जी ने कहा है–

''भोली सूरत देख कर मत करना विश्वास।
रावण ने भी साधु का ही था धरा लिबास।।''[34]

व्यक्तित्व का विघटन आज पूर्णरूपेण हो चुका है। मानवता और आदर्श दिखावामात्र हैं, स्वार्थसिद्धि प्रथम लक्ष्य (प्रयोजन) हो गया। हंस जी ''कामना गीत'' में व्याकुल होकर पुकार उठते हैं और व्यक्तित्व–विघटन की ओर संकेत करते हुए कहते हैं–

''सारे जीवन–मूल्य झुलसते आज स्वार्थ के दावानल में,
मानवता की लाश रखी है, आदर्शों के ताजमहल में।।''[35]

ऐसे परिवेश में जीवन–मूल्यों का अवमूल्यन निश्चित है क्योंकि भौतिक सुख और भोग विलास मन को शांत नहीं अपितु अशांत करते हैं यथा –

''मन को शान्ति न दे सके, भौतिक भोग विलास
मरूस्थली में मत रखो कभी कमल की आस।।''[36]

उदयभानु हंस के काव्य में आदर्शवादी मूल्य दृष्टि का सजीव चित्रण हुआ है। इनके श्रेष्ठ महाकाव्य 'सन्त सिपाही' में भी आदर्श जीवन मूल्यों यथातथ्यांकन हुआ है। ''इस काव्य में नायक गुरू गोबिन्द सिंह का जीवन मानव–मूल्यों का विश्वकोष है। निःसन्देह महान् कवि अपना संदेश, नीति, विचारधारा और सामाजिक दृष्टिकोण आदि स्पष्ट करने के लिए कोई अनुकूल कथानक आधार रूप में चुने लेते हैं और उसके माध्यम से वे अपने व्यक्तित्व को, कथ्य को प्रतिपादित करते हैं। प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उनके अनुभव एवं सिद्धान्त उनकी रचना के नायक के चरित्र–चित्रण से अभिव्यक्त हो जाते हैं।''[37] हंस जी ने 'संत सिपाही' में महान् लोकनायक तथा युग प्रवर्त्तक गुरू गोबिन्द सिंह के व्यक्तित्व को अपना वर्ण्य–विषय बनाया है। इनके माध्यम से इन्होंने तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक धार्मिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों का उल्लेख किया है। गुरू गोबिन्द सिंह का व्यक्तित्व तेजस्वी और बहुआयमी था। हंस जी ने तत्कालीन युग–परिवेश एवं लोकमानस को प्रतिबिम्बित करने के लिए इनको ही प्रेरक एवं उपयुक्त माध्यम माना है क्योंकि इन्होंने भारतीय सांस्कृतिक आदर्श–मूल्यों के संरक्षण के लिए लोकव्यापी आन्दोलन का बिगुल बजाया।
आदर्श मूल्यों में नैतिकता, स्वाभिमान, लोकसेवा, आस्था और विश्वास आदि आदर्श इनके काव्य में ध्वनित हुए हैं। 'संत सिपाही' में वर्णित गुरू गोबिन्द सिंह का जीवन एवं चरित्र आदर्शवादी मूल्यों का विश्वकोष है जिसमें सच्चरित्रता, संयमशीलता और आचरण की शुद्धता पर बल दिया है–

''सच्चरित्रता मूल धर्म का, संयम जीवन की परिभाषा।
शक्ति–शील के गठबन्धन पर, निर्भर मानवता की आशा।''[38]

गुरू गोबिन्द सिंह के आदर्श–मूल्यों के विश्वकोष में दुराचार नाम का कोई शब्द नहीं है। एक बार उनके कतिपय सैनिक सौन्दर्य सम्पन्न मुस्लिम युवती को पकड़ कर ले आए तो इन्होंने सैनिकों को फटकार लगाई और नारी के अपहरण एवं अपमान को निन्दनीय कह कर इस तरह घृणित प्रतिशोध को तुच्छ एवं त्याज्य कहा क्योंकि –

''संत सिपाही है कृपाण रखता अबला की लाज बचाने।
मानवता के विश्वकोष से दुराचार का शब्द मिटाने।''[39]

'ध्यान देना चाहिए' नामक कविता में परोपकार और समाज कल्याण का आदर्श प्रस्तुत करते हुए कहा है–

''सर्वहित साधन हमारा धर्म है, आदर्श है ;
वेद कहता– विश्व का कल्याण होना चाहिए।''[40]

कवि ने जनसाधारण की पीड़ा को अनुभूत किया है। ''कवि समाज का जीवन्त अंश है, जो समाज से ही शुभ–अशुभ, शिव–अशिव, सुन्दर–असुन्दर एक साथ लेकर और भोग कर समाज को बदले में शुभ, शिव और सुन्दर देता है। अभावों में जीने वाला कवि भावों के सागर से शब्दों के मोती चुन–चुन कर समाज को अपनी रचनाओं के माध्यम से देता है, तो जैसे समाज के घावों पर शीतलता का मरहम लग जाता है।''[41] हंस जी ने दीन–हीन, पीड़ित–शोषित प्राणियों को स्नेहभरी थपकी एवं सांत्वना देते हुए कहा है–

''मैंने हर बेबस आँसू की नंगीलाश ढ़की ,
हर बुझते दीपक को अपना स्नेह लुटाया है।
मोती चुन लाया मैं तो हर खारे सागर से,
हर पीड़ा को बोकर मैंने गीत उगाया है।''[42]

धर्म और दर्शन के क्षेत्र में जिसे हम निष्काम कर्म कहते हैं, सामाजिक क्षेत्र में उसे ही संघर्ष कहा जा सकता है। प्रत्येक सामाजिक प्राणी को समाज में प्रतिष्ठित होने के लिए प्रत्यनशील रहना पड़ता है और समाज कर्मशील व्यक्तित्व को ही आदर–सम्मान की दृष्टि से देखता है। परिश्रम, उत्साह और स्वावलम्बन आदि को संघर्ष का ही प्रतिरूप कहा जा सकता है। सामाजिक जीवन मूल्य के संदर्भ में जब संघर्ष–मूल्य पर विचार किया जाता है तो ''हमारा मन्तव्य होता है जीवन में हताशा या तज्जन्य अकर्मण्यता का निषेध करके कर्मरत होना, मानव–सृष्टि या समाज को अधिकाधिक सुखी बनाने के लिए सन्नद्ध होना। संघर्ष स्वयं में विघटन का विरोधी भाव है क्योंकि संघर्ष या कर्म में तो निर्माण का भाव स्पष्ट है।''[43] हंस जी के काव्य में संघर्ष–मूल्य सर्वत्र उद्‌घोषित हुआ है। 'सोने चांदी का नशा' कविता में कवि ने संघर्ष विमुख व्यक्ति को मूर्ख कहा है–

''भाग कर संघर्ष की सम्भावना से,
झट पराजय मान लेना मूर्खता है।''[44]

लेकिन संघर्षशील व्यक्तित्व कर्म–क्षेत्र में आई बाधाओं की चिन्ता नहीं करता अपितु सतत् रूप से कर्मशील रह कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। 'संकल्प गीत' कविता में कवि ने संघर्ष–संकल्प को इस प्रकार प्रकट किया है–

कष्ट के बादल घिरे हम किन्तु घबराते नहीं,
x x x
दुख उठाए हैं उठाएंगे, उठाते ही रहेंगे।
पर्वतों को चीर कर गंगा बहाना चाहते हैं।
हम तरंगों से उलझ कर पार जाना चाहते हैं।''[45]

हंस जी कहते हैं कि जीवन में संघर्ष का अपना महत्त्व है, मूल्य है। साहसी व्यक्ति जीवन मे कुछ अर्जित करने के लिए जान की परवाह नहीं करता उसे इसी संघर्ष में सन्तोष और आन्नद मिलता है। यथा –

''जान का जोखिम उठाने में बड़ा सन्तोष मिलता,
नित्य पा पाकर लुटाने में बड़ा सन्तोष मिलता,
दुख बिना झेले कभी आता नहीं आनन्द पूरा,
सत्य समझो आँसुओं के है बिना जीवन अधूरा।''[46]

पारिवारिक जीवन–मूल्य के अन्तर्गत परिवार में प्रेम सौहार्द, सद्भाव और सहानुभूति आदि मूल्यों की पुष्टि होती है। परिवार समाज की ही प्रतिरूप है। पारिवारिक सुसम्बद्धता गठन और व्यवस्था पर ही समाज का सुख एवं व्यवहार निर्भर करता है। हसं जी के काव्य में पारिवारिक जीवन–मूल्यों का स्वर विभिन्न रूपों में देखने को मिलता है। इन्होंने पारिवारिक जीवन–मूल्यों के साथ उनके विघटन की ओर संकेत करते हुए कहा कि आज परिवार के साथ देश में भी एकता और अखण्डता का ध्यान नहीं रखा जाता, चारों तरफ फूट कर जहर फैला हुआ है–

''फूट के जहर का अनुमान ही नहीं,
देश की अखण्डता का ध्यान ही नहीं।
भाई–भाई के गले को काट रहा,
सांझे परिवार को भी बांट रहा है।''[47]

संयुक्त परिवार और निजी सम्बन्धों में विघटन हो रहा है। पारिवारिक सम्बन्ध केवल स्वार्थपूर्ति का साधन मात्र रह गए हैं, इनमें अपने और पराए की पहचान नहीं रही। 'निष्कर्ष' नामक कविता में इस सजीव वर्णन देखिए –

''सम्बन्धों की निजी कल्पना केवल सपना,
किसे पराय समझे, किसे कहें हम अपना।
सभी स्वार्थ के पुतले हैं छोटे कि बड़े हैं,
ताजमहल में बिना नींव के तने खड़े हैं।''[48]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि हंस जी ने पारिवारिक –सामाजिक जीवन मूल्यों के प्रति गहन आस्था प्रकट की है लेकिन भौतिक उन्नति और सामाजिक प्रतिस्पर्धा ने सामाजिक जीवन–मूल्यों को प्रभावित किया है जिससे व्यक्ति, परिवार और समाज के पुरातन सम्बन्ध यथावत् नहीं रहे उनमें भी पर्याप्त बदलाव आया है। हंस जी ने इस परिवर्तन की अभिव्यक्ति अपने काव्य में की है किन्तु पुरातनता के संबंध में उन्होंने कहा है कि पुरातनता का वही अंश त्याज्य माना गया है जो समय और स्थिति के अनुरूप अपनी उपयोगिता सिद्ध करने में असमर्थ रहा। इस संदर्भ में हम जातीय और साम्प्रदायिक दशा का उदाहरण ले सकते हैं जो हमारी जनतांत्रिक शासन व्यवस्था के प्रतिकूल है जिससे समाज में विभिन्न कारणों से अव्यवस्था और मूल्य –विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गई है इसलिए हंस जी ने मिथ्या जातीय एवं साम्प्रदायिकता की भावना का त्याग करके समाज में प्रेम और सौहार्द–भावना को सुदृढ़ करके परिवार, समाज और देश का उत्थान करने में सहयोग देने की बात कही है। आर्थिक प्रतिस्पर्धा और स्वार्थ की भावना ने जहाँ सम्बन्धों में विच्छेदन–भाव पैदा किया है वहीं संयुक्त परिवार का सम्बन्धी मूल्य–विघटित हुए और एकल परिवार को महत्त्व मिला और अब परिवार केवल पति–पत्नी और बच्चों तक संकुचित होकर रह गए। इस परिवार भावना के फलस्वरूप सौहार्द और स्नेह मूल्य शिथिल हुए हैं जिससे पारिवारिक मूल्य और परिवार की कल्पना व्यर्थ सी जान पड़ती है। हंस जी ने पारिवारिक जीवन मूल्यों के प्रति अड़िग आस्था और गहन निष्ठा प्रकट की है साथ ही अपने काव्य में व्यक्ति और समाज के मूल्यपरक सम्बन्धों की सार्थक अभिव्यक्ति की है लेकिन व्यक्तिपरक नैतिक मूल्यों में आए विघटन से त्रस्त होकर इन्होंने समाज पर कठोर प्रहार किए हैं और अवमूल्यन की इस त्रासदी से समाज को बचाने का प्रयास किया है ताकि सामाजिक सम्बन्धों और मूल्यों का ताना–बाना सुरक्षित रह सके। आज भौतिक अन्धानुकरण के चलते व्यक्ति–स्वातंत्र्य की भावना पनपी; जिससे हृदयगत संवेदना को गायब कर दिया। अतः इस भावना ने व्यक्तिगत आचारण और धारणा को परिवर्तित कर दिया यद्यपि व्यक्ति स्वातंत्र्य आधारभूत मूल्य माना जाता है लेकिन व्यक्ति यदि स्वतंत्र होकर अहं एवं स्वार्थ का त्याग करके कार्य करे तो व्यक्तिगत–सामाजिक–मूल्यों का संरक्षण सम्भव है और यह स्थिति समाज के लिए भी हितकारी है। केवल यही नहीं इन्होंने अपने काव्य में संघर्ष तत्व एवं आदर्श नामक जीवन मूल्यों का जीवन्त चित्रण किया है जिससे धार्मिक समन्वय प्रेम और सौहार्द, त्याग एवं परोपकार, अहिंसा

शांति आदि पर बल दिया। हंस जी ने अपने भाव सागर से अनेक बहूमूल्य आदर्श रूपी शब्द मोती निकालकर दीन–हीन एवं जन साधारण के प्रति संवदेना प्रकट करके उनके घावों पर शीतलता का मरहम लगाया। साथ ही नारी–मूल्य के विभिन्न पक्षों का उद्घाटन करके उनकी सामाजिक दशा और दिशा पर प्रकाश डालते हुए उसे करूणा, त्याग, मर्यादा, परोपकार आदि सहज मानवीय गुणों की निधि एवं परिवार तथा समाज की रीढ़ कहा और उसके मान–मूल्यों की प्रतिष्ठा की। इस प्रकार हंस जी का काव्य और जीवन–मूल्य एक दूसरे में घुल मिल गए हैं। हंस जी ने इन्हीं तत्त्वों एवं तथ्यों को हृदयंगम करके सामाजिक जीवन–मूल्यों के माध्यम से नैतिक आचरण एवं चारित्रिक शुद्धि पर बल दिया और पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति के अन्धानुकरण का त्याग करके भारतीय समाज–संस्कृति एवं इसके जीवन–मूल्यों को अपना कर समाज को नई दिशा प्रदान करने का संदेश दिया। ताकि मानव–जीवन एवं मूल्य समृद्ध हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ0 कुँवरपाल सिंह, हिन्दी उपन्यास : सामाजिक चेतना, पृष्ठ– 17
2. डॉ0 उर्मिला गंभीर, प्रतापनारायण श्री वास्तव के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, पृष्ठ. 38
3. मैरिस, गिन्सबर्ग, सोसलाजी, पृष्ठ 1959
4. श्रीरामचन्द्र वर्मा मानक हिन्दी कोश,पृष्ठ. 284
5. सम्पा० द्वारिका प्रसाद शर्मा, संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ० 934
6. सम्पा० वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश, पृ० 640
7. डॉ. हृदयनाराण मिश्र, विश्वकोश–9, पृष्ठ. 365
8. रोहित मेहता, दि इंटयूटिव फिलॉसफी, पृष्ठ. 39
9. फ्रेडरेक एगल्स, ए टॉपिक्स इन क्रिटिसिज्म, पृ० 588
10. उदयभानु हंस रचनावली–2(कामना गीत) पृष्ठ. 421
11. वही (जीवन की एक दुपहरी) पृ0 451
12. उदयभानु हंस,उ दोहा सप्तशती, पृष्ठ 58
13. डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, तार सप्तक के कवियों की समाज चेतना, पृष्ठ. 102
14. सम्पा0 डॉ0 रामसजन पाण्डेय,उदयभानु हंस रचनावली–1 (अमृत कलश) पृष्ठ 420
15. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली–9 (हिन्दू संस्कृति के अध्ययन के उपादान) पृष्ठ.304
16. सम्पा0 डॉ0 रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस केप्रतिनिधि गीत, मानव प्रेम)पृष्ठ. 37
17. वही0 वही0 वही0
18. उदयभानु हंस, दोहा सप्तशती(महानगर) पृष्ठ0 18
19. उदयभानु हंस रचनावली–2(वासना) पृष्ठ. 504
20. उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत(विश्वशान्ति) पृष्ठ. 102
21. वही0 (मानव प्रेम) पृष्ठ. 37
22. वही0 (अजब तमाशा) पृष्ठ. 63
23. उदयभानु हंस रचनावली–1(चेतावनी) पृष्ठ. 161
24. उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत(घिर आया कुहासा) पृष्ठ. 47
25. उदयभानु हंस, दोहा सप्तशती(कल और आज) पृष्ठ0 62
26. वही0 वही0 वही0
27. उदयभानु हंस रचनावली–2(सोने चांदी का नशा) पृष्ठ. 490
28. उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत(फूल से कह दो) पृष्ठ. 51
29. वही0 वही0 वही0
30. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस की काव्य साधना, पृष्ठ. 75
31. उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत(बदलते रंग) पृष्ठ. 43
32. उदयभानु हंस, दोहा सप्तशती(महानगर) पृष्ठ0 19
33. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस की काव्य साधना, पृष्ठ. 74
34. उदयभानु हंस, दोहा सप्तशती(महानगर) पृष्ठ0 19
35. उदयभानु हंस रचनावली–1(कामना गीत) पृष्ठ. 421
36. उदयभानु हंस, दोहा सप्तशती(सुक्ति सुमन) पृष्ठ. 31
37. सम्पा0 डॉ0 हरिशचन्द्र वर्मा, उदयभानु हंस का प्रबन्ध कौशल, पृष्ठ. 40
38. वही0 (संत सिपाही, पष्ठ सर्ग–संघर्ष) पृष्ठ.118
39. वही0 वही0 वही0 वही0
40. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस रचनावली–2 (ध्यान देना चाहिए) पृष्ठ.524
41. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस की काव्य साधना, पृष्ठ. 111
42. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत, (मानवप्रेम)पृष्ठ.37
43. डॉ रवीन्द्र दरगन, आधुनिक हिन्दीकविता : सांस्कृतिक मूल्य, पृष्ठ. 247–248
44. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस रचनावली–2(सोने चांदी का नशा) पृष्ठ.491
45. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत(संकल्पगीत)पृष्ठ.97
46. वही0 वही0 वही0
47. सम्पा0 डॉ रामसजन पाण्डेय, उदयभानु हंस के प्रतिनिधि गीत (मेरा हिन्दुस्तान कहा है) पृष्ठ.91
48. वही0 उदयभानु हंस रचनावली–1(निष्कर्ष) पृष्ठ. 440